

## जीवन में भाषा का उपयोग

सार

इस लेख में मैंने विभिन्न अहम दस्तावेजों में भाषा और भाषा शिक्षण को लेकर क्या नजरिया प्रस्तुत हुआ है उसकी एक झलक देने का प्रयास किया है। कोशिश यह रही है कि इन नजरियों के बारे में मुख्य बातें आ जाएँ। जाहिर है इसमें बहुत से और पहलू व बारीकियाँ हैं, जिन्हें हम इसमें शामिल नहीं कर सकते। यह सिर्फ मुख्य मसलों को रखने का प्रयास है जिससे हम अधिक से अधिक बातचीत कर पाएँ, एक दूसरे के विचारों से रूबरू हो पाएँ, नये विचारों को जोड़ पाएँ उन्हें संशोधित कर पाएँ व कुछ और आगे बढ़ पाएँ। साथ ही साथ यह भी जानने समझने की कोशिश करें कि भाषायी पाठ्यचर्या के विमर्श में भाषा की बदलती समझ की झलक कैसे-कैसे दिखती है। जाहिर है कि यह सभी प्रयासों को शामिल नहीं करता है किन्तु राष्ट्र में नीति स्तर पर हुए परिवर्तनों की झलक देकर यह भी इंगित करता है कि अलग अलग लोग इसके बारे में अलग-अलग ढंग से सोचते हैं। उनके लिए कौन से प्रयास और उनमें क्या महत्वपूर्ण है या भी अलग-अलग है। मैंने यहां शिक्षकों की धारणाओं व आज की भाषायी कक्षा के उदाहरण भी नहीं दिए हैं पर वे भी यही दिखाते हैं कि फर्क भाषा क्या से लेकर उसे सीखने के मकसद, सिखाने के उद्देश्य व सीखने (कुछ लोग इसे सिखाना कहेंगे) के ढंग तक जाता है। इस सब के अलोक में भाषा शिक्षण के लिए आगे की राह क्या हो यह सोचना होगा।

(इस लेख का कुछ हिस्सा अजीम प्रेमजी द्वारा मई 2017 में आयोजित सेमिनार में प्रस्तुत पेपर “ भाषा शिक्षण: शिक्षकों की तैयारी” रजनी द्विवेदी से लिया गया है)

### परिचय

हम सभी अपने जीवन में भाषा का उपयोग करते हैं : स्वयं से बातचीत करने में और दूसरों से भी। खेलना, मजाक करना, काम की योजना बनाना, काम के लिए किसी को निर्देश देना, कल्पना की उड़ान भरना, इतिहास को जानना, नया इतिहास रचना, और भी बहुत से कार्य हैं जो हम भाषा के बिना कर ही नहीं सकते। हम यह भी जानते हैं कि विषयों और अवधारणाओं को सीखने में ही नहीं बल्कि नये विषयों, नयी अवधारणाओं को रचने, मौजूद विषयों और अवधारणाओं को संशोधित करने उनमें कुछ जोड़ने, इनमें भी भाषा की भूमिका बहुत खास है। भाषा हमारी जिंदगी का एक अहम हिस्सा है लेकिन जैसा कि जीन एचिनसन व अन्य कई भी अब कहते हैं कि भाषा हमारे लिए इतनी सहज है कि हम यह सोच ही नहीं पाते कि यह हमारे लिये कितनी महत्वपूर्ण है।

छोटे बच्चे बड़ी सहजता के साथ भाषा सीखना शुरू करते हैं। स्कूल जाने से पहले ही अपनी भाषा/ भाषाओं पर

उनका अच्छा नियंत्रण हो चुका होता है, वे अपनी भाषा की ध्वनियों को पहचानते हैं, शब्दों को पहचानते हैं, शब्द भण्डार भी वृहद हो चुका होता है वे शब्दों का, वाक्यों का सही सन्दर्भों में प्रयोग भी करना जान चुके होते हैं व करते भी हैं, लेकिन फिर भी स्कूलों में बच्चों को भाषा सिखाना मुश्किल होता है ? प्रश्न यह है कि क्यों अधिकांश स्कूलों की यही उलझन रहती है कि इतने साल पढ़ने के बाद भी बच्चे भाषा नहीं सीख पा रहे/ पाते। वैसे तो भाषायी क्षमता के आकलन के लिए बहुत अच्छे साधन भी उपलब्ध नहीं हैं, किन्तु जिनकी चर्चा है और जो व्यापक स्तर पर उद्धृत किए जाते हैं उनमें एक ‘असर’ की रिपोर्ट है। असर के अध्ययन का दायरा यद्यपि बहुत सीमित है और उसके भाषायी क्षमता के आकलन के ढंग में कई कमियाँ भी हैं फिर भी उसके अवलोकनों पर दृष्टि डालने से चिन्ताजनक परिस्थिति तो सामने आ ही जाती है। ‘असर 2014’ के अनुसार “कक्षा दो में एक तिहाई बच्चे ऐसे हैं जो वर्ण भी नहीं पहचान पाते और यह संख्या पिछले कुछ सालों में

बढ़ी ही है घटी नहीं, इसी तरह कक्षा पांच में लगभग 50% बच्चे ऐसे हैं जो कक्षा दो के स्तर का टेक्स्ट भी नहीं पढ़ पाते।” (अनूदित) सिन्हा के अनुसार “स्कूल में समझकर पढ़ना महत्वपूर्ण है क्यों कि समझकर पढ़ना सीखना हरेक विषय में सफलता पूर्वक ज्ञान निर्माण करने के लिए जरूरी है” (हो वि पत्रिका अंक 14, 1983, प्राशिका 1994, सिन्हा 2012)। “भाषा पढ़ाने वाले शिक्षक की महत्ता की भूमिका की गंभीरता तो इस बात से जाहिर हो जाती है कि एक तो भाषा पूरी पाठ्यचर्या में विद्यमान होती है और दूसरे भाषा ज्ञान सामाजिक संबंधों को कई स्तरों पर मजबूत करती है।” (भारतीय भाषाओं का शिक्षा पर बने राष्ट्रीय फोकस ग्रुप का पोजीशन पेपर, एन.सी.ई.आर.टी., 2006) दूसरे शब्दों में यदि बच्चे भाषा नहीं सीखेंगे तो ना केवल उन्हें विषयों को, उनकी अवधारणाओं को, उनकी बारीकियों को सीखने में कठिनाई होगी बल्कि सामाजिक रूप से भी वे पिछड़ जायेंगे अतः शिक्षक की भाषा व भाषा शिक्षण की समझ व उसकी तैयारी कक्षा में बेहतर भाषा शिक्षण के लिए अनिवार्य हो जाती है।

विभिन्न शोधों, उनके निष्कर्षों, विभिन्न चर्चाओं व विमर्शों, दस्तावेजों तथा नीतियों में भाषा और उसके शिक्षण के बारे में तथा इस सम्बन्ध में सेवापूर्व व सेवारत प्रशिक्षणों के अन्तर्गत कदम उठाने की बहुत सी बातें होती रहती हैं। हालाँकि ज़मीनी स्तर पर ये कदम किस प्रकार क्रियान्वयित हो पाते हैं, हो पाते भी हैं अथवा नहीं यह एक अलग ही विषय है। इस पर्व में कुछ प्रमुख दस्तावेजों में भाषा शिक्षण के बारे में क्या कहा गया है इस बारे में बातचीत है और यह समझने का प्रयास है भाषा की समझ में किस तरह का विस्तार हुआ है। अंत में इस बारे में बातचीत है कि यह सब होने के बावजूद आज भी भाषा की कक्षाएं इतनी बेरंग क्यों हैं ?

## शिक्षा नीति – 1968

शिक्षा नीति में बिंदु चार के अंतर्गत भाषाओं के विकास के बारे में बात की गयी है। इस बिंदु के उप बिंदुओं को पढ़ने पर प्रतीत होता है कि सभी भाषाओं को बराबर जगह दी गयी है और सभी भाषाओं के विकास के बारे में बात की गयी है लेकिन थोड़ा गहराई से पढ़ने पर लगता है

कि वास्तव में इसमें भाषा को लेकर कोई ठोस बात नहीं कही गयी है। जैसे उपबिंदु 3 (a), क्षेत्रीय भाषा, के अंतर्गत नीति कहती है कि “शिक्षा और संस्कृति के विकास के लिए भारतीय भाषाओं और साहित्य का उर्जावान विकास एक जरूरी शर्त है। जब तक यह नहीं होगा लोगों की सृजनात्मक ऊर्जा बाहर नहीं आयेगी, शिक्षा के मानकों में बेहतरी नही होगी और लोगों में ज्ञान का प्रसार नहीं होगा और बौद्धिक समाज और आम जनता के बीच खाई बनी रहेगी यदि चौड़ी नहीं होगी तो” .. (अनूदित) और आगे यह कि इस हेतु प्राथमिक व सेकंडरी स्तर पर क्षेत्रीय भाषाओं के शिक्षण और महाविद्यालयों में भी इन भाषाओं को अनुदेशन का माध्यम बनाने हेतु जल्द से जल्द प्रयास किये जाने को निर्देशित भी करती है।

लेकिन पूरे दस्तावेज में कहीं यह स्पष्ट नहीं है कि क्षेत्रीय भाषा का क्या तात्पर्य है? क्या क्षेत्रीय भाषा के अंतर्गत राज्यों की राज्यभाषा ही आयेगी अथवा, राज्य के अलग अलग जिलों में बोली जाने वाली भाषाएँ भी इसमें सम्मिलित होंगी और वे भाषाएँ भी सम्मिलित होंगी जो इन जिलों के अलग अलग हिस्सों में बोली जाती हैं? प्राथमिक स्तर पर क्षेत्रीय भाषा में शिक्षण हो और ऐसा सेकंडरी तथा महाविद्यालय स्तर तक करने के प्रयत्न किये जाएँ, इसका तात्पर्य क्या यह है कि उस क्षेत्र के सभी बच्चों की शिक्षा एक क्षेत्रीय भाषा में ही होगी, या फिर यह कि हर बच्चे की क्षेत्रीय भाषा के अनुसार शिक्षण संस्थान होंगे। अब यह हम सब जानते हैं कि ऐसा कतई जरूरी नहीं कि क्षेत्रीय भाषा हर बच्चे की मातृभाषा हो।

यह हिंदी को आगे ले जाने और एक लिंक भाषा के रूप में विकसित करने और अहिन्दीभाषी राज्यों में हिंदी महाविद्यालयों की स्थापना पर जोर देती है जिसका तात्पर्य यह हो सकता है कि क्षेत्रीय भाषा भी पढ़ाई का माध्यम हो सकती है और हिंदी भी अथवा यह कि उच्च कक्षाओं में तो हिंदी ही पढ़ाई का माध्यम होगी, या फिर यह कि क्षेत्रीय भाषा व हिंदी भाषा दोनों विषयों के रूप में पढ़ाई जायेगी और माध्यम की भाषा हिंदी ही होगी।।

नीति विभिन्न उद्देश्यों के मद्देनजर हिंदी, संस्कृत व अंग्रेजी के विकास की भी बात करती है लेकिन भाषा के

विकास की बात के केंद्र में है सांस्कृतिक एकीकरण (हिंदी एक लिंक भाषा के रूप में, संस्कृत के सांस्कृतिक एकता में योगदान को देखते हुये), विज्ञान और तकनीकी विकास (अंग्रेजी सीखने से देश बाकी दुनिया के साथ कदम मिलकर चल सकें बिंदु ३ (य)) और आर्थिक विकास।

कुल मिलाकर जमीनी स्तर पर यह विचार कैसे क्रियान्वित होंगे, माध्यम की भाषा क्या होगी, इस बारे में कोई स्पष्टता नहीं है। भाषा से सम्बंधित महत्वपूर्ण पहलु यथा भाषा ज्ञान रचने की बुनियाद, भाषा एक जन्मजात क्षमता, भाषा और बौद्धिक विकास, भाषा और सोच, भाषा और बराबरी, भाषा समाज और सत्ता से सम्बंधित मुद्दे इसमें कहीं परिलक्षित नहीं होते।

### पाठ्यचर्या की रूपरेखा 1975- एवं 1988

एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा 1975 में विकसित दस वर्षीय विद्यालयी शिक्षा के लिए पाठ्यचर्या की रूपरेखा ने भी सांस्कृतिक एकता बनाए रखने के उद्देश्य से त्रिभाषा सूत्र को अपनाने की बात को ही दोहराया, दस्तावेज ने अलग अलग स्तरों पर (प्राथमिक, माध्यमिक, सेकेंडरी) अलग अलग भाषाएँ पढ़ाने की बात करते हुये यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि त्रिभाषा सूत्र किस तरह लागू हो सकता है हालांकि इस दस्तावेज में भी भाषाई परिप्रेक्ष्य की कोई बात नहीं थी महज निर्देशित किया गया था कि ऐसा होना चाहिए। आगे आने वाले दस्तावेजों आरंभिक और माध्यमिक शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या: एक रूपरेखा, 1988 में भी त्रिभाषा सूत्र पर जोर दिया गया, कुछ अन्य बातों को भी रेखांकित किया गया जैसे कि “भाषा सीखना बच्चे के लिए ना केवल खुद के प्रयोजनों के लिए महत्वपूर्ण है बल्कि यह इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह अन्य विषयों को सीखने, उसके सामाजिक, भावनात्मक व संज्ञानात्मक विकास को भी प्रभावित करता है।” (एन.सी.ई.आर.टी., 1988, पेज 20).. यह कहता है कि “भाषा सीखने का प्रभाव अन्य विषयों के सीखने पर भी पड़ता है अतः भाषा शिक्षण को शिक्षा प्रक्रिया में एक केंद्रीय स्थान मिलना चाहिए... भाषा शिक्षा को सीखने वालों में शुरुआत से ही स्वतंत्र सोच को बढ़ावा देने वाले

एक औजार की तरह देखा जाना चाहिए।” (एन.सी.ई.आर.टी., 1988 पेज 20) इसने भाषा शिक्षण में पाठ्यपुस्तकों के अलावा अन्य पुस्तकों की भूमिका की महत्ता का भी जिक्र किया। यह निर्देशित करता है कि “प्राथमिक कक्षाओं में एक ही भाषा पढ़ायी जायेगी मातृभाषा/ क्षेत्रीय भाषा” (एन.सी.ई.आर.टी. 1988 पेज 19) लेकिन आगे यह कहता है कि “यदि आदिवासी बच्चों की अपनी कोई बोलचाल की भाषा है तो कक्षा एक व दो में उन्हें उनकी मातृभाषा का उपयोग करते हुये मौखिक रूप से पढ़ाया जा सकता है। साथ ही इन बच्चों को क्षेत्रीय भाषा भी सिखानी होगी क्यों कि आगे जाकर यही अनुदेशन का माध्यम बनेगी” (एन. सी. ई. एस. ई. 1988 पेज 20) और इस तरह मातृभाषा की बात को एक तरह से दरकिनार भी कर देता है। लगभग ऐसी ही कुछ बातों का जिक्र स्कूली शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2000 भी करती है। लेकिन इन सुझावों की तह में क्या सिद्धांत और क्या तथ्य हैं, इसकी कोई बात नहीं हुई है। इसका कोई खुलासा नहीं है कि क्यों प्राथमिक कक्षा में मातृभाषा से ही शुरुआत हो। यह शुरुआत अन्य भाषाओं से क्यों नहीं होनी चाहिए, ऐसा होने से क्या परेशानी हो सकती है/ हो रही है। भाषा सीखने और अन्य विषयों को सीखने में क्या सम्बन्ध है?, इत्यादि।

### न्यूनतम अधिगम स्तर (एम. एल. एल)

एम एल एल दस्तावेज मूलतः शिक्षा नीति, 1986 का अनुसरण करते हुये बनाया गया था। शिक्षा नीति, 1986 के अनुसार हर स्तर के लिये न्यूनतम अधिगम स्तर तय किया जाना चाहिए, और इसके पीछे यह सोच थी कि शिक्षकों को यह नहीं पता होता कि उन्हें कक्षा में क्या करवाना है, यदि स्तरवार बच्चों को क्या सीखना है, ये बता दिया जाय तो उन्हें कक्षा हेतु विभिन्न गतिविधियाँ सोचने में मदद मिलेगी।

वैसे भाषा/ओं के स्कूल में वजूद और सीखने सिखाने में भूमिका व भाषा शिक्षण इस सम्बन्ध में कोई बात नहीं कही गयी। हालांकि दिये गये बिंदु जो कुछेक ही हैं उनमें यह जरूर परिलक्षित होता है कि भाषाई विविधता है और

इसे बरकरार रखने के लिये कुछ प्रयासों की जरूरत है, लेकिन यह भी बहुत संजीदगी से कहा गया हो ऐसा नहीं प्रतीत होता।

यदि एम एल एल दस्तावेज में भाषा सीखने-सिखाने के नज़रिए की बात करें तो यह भाषायी क्षमता तो 9 उप क्षमताओं में बांटता है यथा; सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना, पढ़े और सुने विचारों को समझना, स्व अधिगम, व्यवहारिक व्याकरण, भाषा प्रयोग और शब्दों पर अधिकार। हर एक क्षमता को पुनः कक्षा के स्तर को ध्यान में रखते हुये अन्य उप क्षमताओं में बांटा गया है। जैसे कक्षा एक में बोलने की क्षमता में यह सम्मिलित है: सरल वाक्यों को दोहराना, सरल कविताओं गीतों को समूह में हाव भाव के साथ गाना, सरल यानि हाँ ना के प्रश्नों के उत्तर दे पाना, और सरल सवाल पूछ पाना। हालांकि दस्तावेज यह कहता है कि ऊपर वर्णित भाषाई क्षमताओं को अलग नहीं किया जा सकता लेकिन फिर यह भी कहता है कि आकलन के लिये इन्हें इस प्रकार से विभाजित करना ही होगा ताकि शिक्षकों को यह पता चल सके कि हर कक्षा में बच्चे कम से कम क्या सीखें? दूसरे शब्दों में कक्षा एक के अंत में आते आते बच्चे बोलने की क्षमता में ये आउटपुट दे पाएँ। बाकी अन्य क्षमताओं को भी इसी तरह विभाजित किया गया है।

इसमें कई समस्याएं हैं, पहली समस्या तो यह कि इसमें बच्चे की भाषा सीखने की क्षमताओं पर ही प्रश्न हैं, वह यह कि बच्चा एक समृद्ध भाषाई वातावरण मिलने पर न केवल भाषा व भाषा की कई बारीकियां बिना किसी सजग प्रयास के सीख लेता है, दूसरा ऐसा स्पष्ट प्रतीत होता है कि दस्तावेज यह मानता है कि भाषाई क्षमतायें दिये गये क्रम में ही बच्चे में विकसित होगी कक्षा पहली में कुछ, फिर दूसरी में कुछ और फिर प्रत्येक कक्षा में भी पहले क्या सीखेगा व बाद में क्या यह भी दस्तावेज बताता है, हम जानते है कि सीखने का कोई रेखिक क्रम नहीं होता, कोई बच्चा पहले क्या सीखेगा क्या नहीं मोटे तौर पर इस बारे में कुछ कयास लगाया जा सकता है लेकिन वह वही सीखेगा जो आपने या किसी और ने तय कर लिया है ऐसा नहीं होता।

हम यह भी भली भाँती जानते हैं बच्चा भाषा टुकड़ों टुकड़ों में व चरण दर चरण नहीं सीखता बल्कि समग्रता में सीखता है। हमें भले ही यह लगे कि वह एक एक कर के शब्द सीख रहा है लेकिन बच्चा जानता है कि वह एक शब्द जो उसने किसी समय विशेष पर सीखा है वह किस रूप में उसके लिये समग्र है।

तीसरा यह जरूरी नहीं है कि बच्चा वही सीखे जो आप सिखाना चाहते हैं, आप उसे कविता बोलने को कहे तो वह गीत भी बोल सकता है, वह अर्थहीन ध्वनियों की तुकबंदी भी कर सकता है, वह ऐसी कविता भी बोल सकता है जो आपको उसके स्तर के लिये कठिन प्रतीत होती हो, और ऐसा भी हो सकता है कि वह उस वक्त कुछ भी ना बोले जब आप उससे बुलवाना चाहे, कविता की दो पंक्तिया भी बोल सकता है और भी कई संभावनाएं हो सकती हैं, पर उन संभावनाओं की जगह नहीं है।

चौथा, इसकी अपेक्षाएं शिक्षक व बच्चों के सम्बन्ध को एक तरह से मृत सा कर देती है जैसे शिक्षक का काम है बच्चे से दिया गया आउटपुट निकलवाना, वह बस इसी दिशा में काम करे, अपने लक्ष्य से भटके नहीं। और लक्ष्यों की पूर्ति में कक्षा में भाषा सिखाने का एक ऐसा कृत्रिम फ्रेमवर्क बन जाता है जो रोजमर्रा की जिंदगी से दूर असहज सा होता है। और इसी कृत्रिम फ्रेमवर्क में आता है बच्चे को ऐसा इनपुट देना कि निर्धारित आउटपुट सुनिश्चित हो पाए। इस वजह से बच्चे हर स्तर पर कोम्प्रेहेंसिव भाषायी इनपुट से वंचित ही रह जाते हैं।

जबकी भाषा सीखने में कोम्प्रेहेंसिव इनपुट की भूमिका महत्वपूर्ण है, और कोई इनपुट कोम्प्रेहेंसिव कब होगा यह पहले से ही तय नहीं किया जा सकता, यह तो सीखने सिखाने वाले के बीच अन्तः क्रिया पर बहुत निर्भर करता है। क्यों कि तभी सिखाने वाला जान सकता है कि सीखने वाले के पास किस किस तरह के अनुभव हैं उसकी क्या रूचियाँ है, उसकी क्या संस्कृति है इत्यादि जिन के आधार पर उसके लिये नये अनुभवों को गढा जाना चाहिए।

संक्षिप्त में, एम एल एल दस्तावेज में प्रयास तो यह था कि शिक्षकों को अपनी कक्षा हेतु लक्ष्यों को निर्धारित करने

में मदद मिले लेकिन इस फ्रेमवर्क में अन्य कई महत्वपूर्ण बिंदुओं, विशेषकर बच्चे की सीखने की क्षमताओं, सीखने की रुचियों, सीखने में समाज व संस्कृति की भूमिका, शिक्षक छात्र संबंधों, कक्षा कक्ष प्रक्रियाओं में सहजता, भाषा और उसकी प्रकृति, भाषा, इंसान और पहचान इत्यादि के बारे में नहीं सोचा गया।

### प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (प्राशिका)

इस दस्तावेज का यहाँ जिक्र करना कुछ वजहों से महत्वपूर्ण है – पहली वजह यह कि यह दस्तावेज भी लगभग उसी दौरान विकसित किया गया था जब कि एम एल एल दस्तावेज बन रहा था और एम एल एल समिति को इससे संबंधित दस्तावेजों की न सिर्फ जानकारी थी पर यह उन्हें उपलब्ध भी थे। किन्तु शुरूआती शब्दावली के बाद (या शायद शुरू से ही) इस दस्तावेज में भाषा सीखने सिखाने की जो समझ परिलक्षित होती है वह एम एल एल दस्तावेज से बहुत ही अलग है। एक अन्तर तो यह ही है कि इसमें भाषा सीखना-सिखाने को, सीखने-सिखाने की व्यापक समझ के अंतर्गत लिया गया है दूसरे शब्दों में बच्चों के सीखने की प्रक्रिया, बच्चों के सीखने की क्षमता, बच्चों की सामाजिक व सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, शिक्षक छात्र सम्बन्ध इत्यादि सब की भी सीखने में, (किसी भी चीज को, विषय को, अवधारणा को) अहम भूमिका होती है इसे बड़े ही सपष्ट शब्दों में बताया गया है। जैसे दस्तावेज कहता है कि “शिक्षकों और बच्चे के बीच संवाद में यह दबाव होता है कि गुरुजी की भाषा बच्चे समझें। लेकिन इस पाठ्यक्रम में माना गया है कि अध्यापक को शुरू से ही बच्चों की भाषाएँ सीखनी चाहिए। इसी से वह बच्चे की बात को समझ पायेगा। और उसे अपनी बात पहुंचा पायेगा। इसी प्रक्रिया में धीरे- धीरे बच्चा उसकी बात समझने लगेगा। मुख्य बात यह है कि बच्चे सीखते तभी हैं जब वह उस प्रक्रिया में सक्रिय हों। सिर्फ बैठकर सुनने से या सुना हुआ दोहराने से सीखना नहीं होता। यह सक्रियता तभी होगी जब बच्चों की भाषा शिक्षक समझेगा और इस्तेमाल करेगा।”

दस्तावेज आगे उदाहरण देते हुये कहता है कि किसी एक चीज को सीखने के लिये बच्चों को एक ही अनुभव

को बार बार दोहराने की नहीं वरन अलग अलग अनुभवों की जरूरत होती है और बच्चों की जरूरत के अनुसार अनुभव बुनने की शिक्षक के पास स्वतन्त्रता होनी चाहिए। यह एम एल एल से इस मायने में भी अलग है कि यह सु,बो,प,लि (अर्थात सुनना, बोलना, लिखना, पढना) को क्रमिक रूप से ग्राह्य नहीं मानता। और इन्हें समझने व अभिव्यक्ति के दायरे में ही रखता है। अतः उसके लिए सुना हुआ वाक्य याद करके दोहराना अथवा नकल करके लिखना भाषा सीखने के हिस्से नहीं हैं।

दस्तावेज यह भी मानता है कि भाषा एक चरण दर चरण व टुकड़ों टुकड़ों में चलने वाली प्रक्रिया नहीं है कि जब जो सीखना है उसका अनुभव दे दिया जाये, बल्कि यह एक समग्र प्रक्रिया है, अतः बच्चों को भाषा को सुनने के, अभिव्यक्त करने के यानी उसका अधिक से अधिक उपयोग करने के मौके दिये जाने चाहिए तभी धीरे धीरे उस भाषा पर अपना अधिकार बना पाएंगे। इस दस्तावेज से जुड़ा पाठ्यक्रम भी भाषा के प्रति एक फर्क दृष्टि स्पष्टतः प्रस्तुत करता है। इसके अनुसार भाषायी क्षमता इन्सान होने का महत्वपूर्ण आधार है। यह मात्र एक विषय नहीं वरन हमारे वजुद की रचनाकार है। पहचान का प्रश्न, सोचने, कल्पना करने, अवधारणाओं को समझने व गढ़ने में भाषा का अनिवार्य योगदान है। इस लिए इसके अनुसार भाषा सिखाने की जिम्मेदारी सिर्फ भाषा शिक्षक की नहीं वरन सभी शिक्षकों की है।<sup>8</sup>

यह दस्तावेज, जैसा कि ऊपर जिक्र किया गया है 1990 के आसपास बन चुका था और भाषा के बारे में और सीखने-सिखाने के बारे में बहुत सी अहम बातें इसमें रखी गईं और बड़े ही सहज ढंग से व उदाहरणों के साथ लेकिन इस दस्तावेज को नज़रअंदाज किया गया और आगे आने वाले दस्तावेजों, अधिगम के न्यूनतम स्तर (एम एल एल) और यहाँ तक कि पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2000 में भी इन्हें नहीं शामिल किया गया।

### राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005

भाषा व भाषा शिक्षण के बारे में बहुत विस्तार से चर्चा है। यह चर्चा हमें भाषा व भाषा शिक्षण के बारे में एक परिप्रेक्ष्य तो देती ही है और भाषा व भाषा शिक्षण के प्रति

जो नजरिया चला आ रहा था, (और कई संस्थानों में : स्कूल, शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान, राजकीय शिक्षा संस्थान इत्यादि में अब भी मौजूद है ) उस नजरिये पर पुनः सोचने को बाध्य करती है, और भाषा सम्बंधित प्रचलित रूढ़ियों को तोड़ने में मदद करती है।

दस्तावेज रेखांकित करता है कि हर बच्चे में भाषा सीखने की एक सहजात क्षमता होती है और जैसे जैसे वह बड़ा होता है वह अपने घर की, अपने आस - पास की भाषा बिना किसी सजग प्रयास के सीख लेता है। एक तीन-चार साल का बच्चा अपनी भाषा को जानता है और वह उसका धारा प्रवाह उपयोग करने में सक्षम भी होता है। यानी स्कूल में जब बच्चा प्रवेश लेता है तो उसके पास अपनी भाषा का पूरा तंत्र जो अन्य किसी भाषा तंत्र जितना ही जटिल है उस पर पूरा अधिकार होता है जैसा कि पहले भी जिक्र किया है, उसके पास ध्वनियों, उनको उच्चारित करने, ध्वनियाँ किस क्रम में व्यवस्थित हो सकती है किस क्रम में नहीं, शब्द, शब्दों के अर्थ, वाक्य, वाक्य संरचना इन सभी के बारे में समझ होती है। वह अपनी उस भाषा में लोगों से बात करने की क्षमता, किसी चीज का विवरण देने की क्षमता, अपनी बात को अभिव्यक्त करने की क्षमता भी रखता है। वह भाषा का प्रयोग करके अवधारणाएं बनाना, उनको समझना, विकसित करना यह सब भी जानता है। बच्चे द्वारा अर्जित यह यह ज्ञान बहुत महत्वपूर्ण होता है क्यों कि यही ज्ञान वह जो आगे सीखता है, इसकी बुनियाद बनता है।

इसीलिए दस्तावेज स्पष्ट रूप से कहता है कि शिक्षण बच्चे की मातृभाषा में ही होना चाहिये। भाषा ज्ञान के सृजन हेतु एक आवश्यक बुनियादी क्षमता है, यदि मातृभाषा में शिक्षण होगा तो यह बच्चे को ज्ञान को सहज रूप से हासिल करने में भी मदद करेगा। आप समझ सकते हैं कि किसी नयी अवधारणा को किसी नयी भाषा में सीखना कितना मुश्किल हो सकता है। इस स्थिति में पहले हासिल किया ज्ञान में मदद नहीं कर सकता। मातृभाषा में शिक्षण बच्चों को उनके द्वारा ही हासिल किये ज्ञान को उपयोग करने का मौका देता है, जिससे ज्ञान पाठ्यपुस्तकों से बाहर निकलकर बच्चों के जीवन का भी हिस्सा बन सकेगा, बच्चों को चीजों को रटने से मुक्ति मिलेगी।

भाषा इंसान की अस्मिता, सांस्कृतिक जड़ों, विचार प्रक्रिया से गहराई से जुड़ी है। कक्षा में बच्चों की भाषा का तिरस्कार एक तरह से उस ज्ञान का और ज्ञान तंत्र का तिरस्कार है जो बच्चों के पास है, वह ज्ञान जो उन्होंने अपने परिवारजनों, दोस्तों, सम्बन्धियों, अपने समाज के साथ अन्तःक्रिया करते हुये बनाया है। यह ना केवल बच्चों के स्वयं के प्रति विश्वास को कमजोर करता है पर साथ ही उनकी सामाजिक व सांस्कृतिक जड़ों को भी कमजोर करता है। कक्षा में बच्चों की भाषा को जगह देने से उनका अपनी क्षमताओं में विश्वास बढ़ेगा और वे अपने समाज व संस्कृति को समझ व सराह भी पायेंगे जिससे उनका आत्मविश्वास भी बढ़ेगा। एन सी एफ के अनुसार “बच्चे की घरेलू भाषाएँ ही स्कूल में शिक्षण का माध्यम होनी चाहिए.. अगर स्कूल में उच्चतर स्तर पर बच्चों की घरेलू भाषाओं में शिक्षण की व्यवस्था ना हो तो प्राथमिक स्तर की स्कूली शिक्षा अवश्य घरेलू भाषाओं के माध्यम से दी जाय”। (एन.सी.ई.आर.टी. 2005, पृ. 42) उन विद्यार्थियों के लिए अधिक से अधिक अवसर हो जो अपनी मातृभाषा में पढ़ना चाहते हैं,....चाहे विद्यार्थियों की संख्या कम हो फिर भी अपनी भाषा में पढ़ने के मौके होने चाहिए। (एन.सी.ई.आर.टी. पृ., 76)

दस्तावेज द्वि/बहुभाषिकता को बढ़ावा देने की बात करता है और इस सन्दर्भ में चर्चा भी करता है कि बहुभाषिकता एक समस्या नहीं बल्कि एक संसाधन है। हालाँकि व्यावहारिक रूप से बहुभाषिकता को लागू करने के लिए हर स्तर पर बहुत तैयारी की आवश्यकता है लेकिन यह तो अब काफी स्पष्ट है कि बहुभाषिकता एक ऐसा संसाधन है जो ना केवल बच्चों को भाषा/ओं की बारीकियों को समझने में मदद करता है बल्कि उनको विश्वास मजबूत करता है कि वे जाने पहचाने माहौल में है और सुरक्षित हैं और यही विश्वास उनको कक्षा में सक्रिय भागीदारी करने, शिक्षक व अन्य बच्चों के साथ एक मजबूत व संवेदनशील रिश्ता बनाने में भी मदद करता है। हम यह भली भाँति जानते हैं की ये सभी सीखने – सिखाने की प्रक्रिया के महत्वपूर्ण पहलू हैं। स्कूल का उद्देश्य बच्चों को हर वक्त टोक टोक कर शुद्ध भाषा सिखाने का प्रयास

करना नहीं है, बल्कि यह समझते हुये कि गलतियाँ उनके अधिगम का हिस्सा है उन्हें अधिक से अधिक ऐसे मौके उपलब्ध करवाना हैं, जहाँ बच्चे भाषा से सहज अन्तः क्रिया कर सकें इस तरह वे स्वयं ही धीरे धीरे शुद्ध व मानक भाषा सीख लेंगे। यह उपयुक्त पाठ्यपुस्तकों व पुस्तकालय की उपलब्धता कक्षा में भयमुक्त वातावरण बनाने की, कवितायें व कहानियों के कक्षा में अधिकाधिक उपयोग किये जाने की जरूरत पर भी बल देता है। दस्तावेज कहता है कि भाषा पूरी पाठ्यचर्या में विद्यमान है यह भाषा में मूल्यांकन की प्रक्रिया, गलतियों को किस नजरिये से देखा जाय, सीखने सीखने की सामग्री व गतिविधियाँ कैसी हो इन सब बिंदुओं पर भी प्रकाश डालता है।

भारतीय भाषाओं का शिक्षण पोजीशन पेपर का दस्तावेज ऊपर वर्णित सभी बिंदुओं को थोड़ा और विस्तार देता है और भाषा, शिक्षा, इंसान व समाज के रिश्ते के विभिन्न पहलुओं के बारे में चर्चा करते हुये इन बिंदुओं को समझने की एक दिशा देता है। इस पोजीशन पेपर में भाषा, भाषा की संरचना, मातृभाषा, बहुभाषिता, भाषा और लिपि, भाषा और इंसान का रिश्ता, भाषा और समाज का रिश्ता, भाषा व सत्ता, एक भाषा का अन्य भाषा पर वर्चस्व, भाषा की शुद्धता व मानकीकरण,

भाषा व व्याकरण, भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन, भाषा व सोच, भाषा शिक्षण, बच्चों की भाषा सीखने की क्षमता, शिक्षकों की तैयारी आदि सम्मिलित हैं। यह शिक्षकों में इन सभी बिंदुओं की समझ हो और इस हेतु उपयुक्त प्रशिक्षण कार्यक्रम बनाए जाय इसकी सिफारिश करता है

हालाँकि यह सब हो कैसे पायेगा, इस हेतु पूरे तंत्र में कहाँ व क्या परिवर्तन करने होंगे, जो इस सोच को पोषित करेंगे, और क्रियान्वित करने में मददगार होंगे इस बारे में विस्तृत चर्चा इस दस्तावेज में नहीं है। जैसे एक अध्यापक मातृभाषा शिक्षण की अहमियत को समझे, बहुभाषिकता को समझे, बच्चों की भाषा सीखने की सहज क्षमता से क्या तात्पर्य है यह समझे व फिर अपनी कक्षा में बच्चों के साथ भाषा शिक्षण हेतु उपयुक्त गतिविधियाँ चुन पाए, इस हेतु अध्यापक तैयारी किस तरह की होगी, सन्दर्भ सामग्री कहाँ से आयेगी? प्रशिक्षकों की तैयारी कैसे होगी इन प्रश्नों के बारे में खास चर्चा नहीं है। आज भाषा के शिक्षण में सामान्य कक्षाओं में व शिक्षकों के मन में प्रमुख विचारों का जायजा लेने पर हम NCF 2005 के व उससे जुड़े दस्तावेजों की सोच को अनुपस्थित पाते हैं तो यह सवाल जरूर उठता है कि इसके पीछे क्या कारण हैं और कैसे प्रयासों की जरूरत है जो इस स्थिति को बदल सकें।

### सन्दर्भ

एन.सी.ई.आर.टी. (2009), भारतीय भाषाओं में शिक्षण पर बने राष्ट्रीय फोकस ग्रुप का पोजीशन पेपर, नयी दिल्ली  
 एन.सी.ई.आर.टी. (2005), *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा*, नयी दिल्ली  
*प्राशिका पाठ्यक्रम*, एकलव्य, भोपाल (अप्रकाशित)

Dewan H.K., What does Language Teaching Means? Sewa Mandir News *letter*, Udaipur.

Dwivedi R. Nagda S.S. (2009), What do Teachers think of Language Teaching, *Learning Curve*, issue XIII, October, 2009.

### वेब सन्दर्भ

1. ASER(2014) [http://img.asercentre.org/docs/Publications/ASER%20Reports/ASER%202014/fullaser2014mainreport\\_1.pdf](http://img.asercentre.org/docs/Publications/ASER%20Reports/ASER%202014/fullaser2014mainreport_1.pdf)
2. भाषा व भाषा शिक्षण: कुछ विचार, एच के दीवान, रमाकांत अग्निहोत्री, होशंगाबाद विज्ञान बुलेटिन [https://www.eklavya.in/pdfs/archives/vigyan\\_bulletin/Hoshangabad\\_Vigyan\\_Bulletin\\_issue\\_14.pdf](https://www.eklavya.in/pdfs/archives/vigyan_bulletin/Hoshangabad_Vigyan_Bulletin_issue_14.pdf)
3. NPE (1968) [http://mhrd.gov.in/sites/upload\\_files/mhrd/files/document-reports/NPE-1968.pdf](http://mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/document-reports/NPE-1968.pdf)

4. NCESE (1988) [http://www.ncert.nic.in/oth\\_anoun/NCESE\\_1988.pdf](http://www.ncert.nic.in/oth_anoun/NCESE_1988.pdf)
5. NCF for 10 year School (1975) [http://www.ncert.nic.in/oth\\_anoun/NCF\\_10\\_Year\\_School\\_eng.pdf](http://www.ncert.nic.in/oth_anoun/NCF_10_Year_School_eng.pdf)
6. NCF SE (2000) [http://www.ncert.nic.in/oth\\_anoun/NCF\\_2000\\_Eng.pdf](http://www.ncert.nic.in/oth_anoun/NCF_2000_Eng.pdf)